IJIRSET
International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 11, Issue 11, November 2022

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 8.118

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में साम्प्रदायिकता: स्वतंत्रता से लेकर वर्तमान तक एक विश्लेषण

Dr. Rajesh Kumar Chauhan

Associate Professor, Dept. of Political Science, Govt. College, Bundi, Rajasthan, India

सार

साम्प्रदायिकता एक ऐसा शब्द है जिसका उपयोग धार्मिक या जातीय पहचान के निर्माण के प्रयासों को दर्शाने, विभिन्न समुदायों के रूप में पहचाने गए लोगों के बीच संघर्ष को भड़काने और उन समूहों के बीच सांप्रदायिक हिंसा को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है। यह इतिहास, विश्वासों में अंतर और समुदायों के बीच तनाव से निकला है। सांप्रदायिकता भारत , बांग्लादेश , पाकिस्तान और श्रीलंका में एक महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दा है । भारत में धार्मिक समुदायों, विशेष रूप से हिंदुओं और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिक संघर्ष ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की अवधि के बाद से हुआ है, कभी-कभी गंभीर अंतर-सांप्रदायिक हिंसा के लिए अग्रणी।

साम्प्रदायिकता शब्द ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार द्वारा गढ़ा गया था क्योंकि यह 20 वीं शताब्दी की शुरुआत में , विशेष रूप से ब्रिटिश पश्चिम अफ्रीका और केप कॉलोनी में अपने उपनिवेशों में धार्मिक, जातीय और अलग-अलग समूहों के बीच हिंदू-मुस्लिम दंगों और अन्य हिंसा का प्रबंधन करने के लिए संघर्ष कर रहा था।

सांप्रदायिकता दक्षिण एशिया के लिए अद्वितीय नहीं है। यह अफ्रीका, अमेरिका, एशिया, यूरोप और ऑस्ट्रेलिया में पाया जाता है।

परिचय

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान 20 वीं शताब्दी की शुरुआत में यह शब्द प्रयोग में आया। 1909 में मॉर्ले-मिंटो अधिनियम द्वारा सांप्रदायिकता को वैध बनाने के लिए मिंटो के चौथे अर्ल को सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल का जनक कहा गया । [1,2] अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और हिंदू महासभा ने ऐसे सांप्रदायिक हितों का प्रतिनिधित्व किया, और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने एक व्यापक प्रतिनिधित्व किया "राष्ट्रवादी" दृष्टि। 1947 में स्वतंत्रता की दौड़ में, सांप्रदायिकता और राष्ट्रवाद प्रतिस्पर्धी विचारधाराओं के रूप में सामने आए और ब्रिटिश भारत के पाकिस्तान और भारत गणराज्य में विभाजन का कारण बने।. ब्रिटिश इतिहासकारों ने विभाजन का कारण जिन्ना की साम्प्रदायिकता और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं को बताया है। यदि हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में सांप्रदायिकता पर दृष्टिपात करें तो यह आधुनिक राजनीति के उद्भव का ही परिणाम है। हालाँकि इससे पूर्व भी भारतीय इतिहास में हमें ऐसे कुछ उदाहरण मिलते हैं जो सांप्रदायिकता की भावना को बढ़ावा देते हैं लेकिन वे सब घटनाएँ अपवाद स्वरूप ही रही हैं। उनका प्रभाव समाज एवं राजनीति पर व्यापक स्तर पर नहीं दिखता। वर्तमान संदर्भ में सांप्रदायिकता का मुद्दा न केवल भारत में अपितु विश्व स्तर पर भी चिंता का विषय बना हुआ है। [3,4] सांप्रदायिकता एक विचारधारा है जिसके अनुसार कोई समाज भिन्न-भिन्न हितों से युक्त विभिन्न धार्मिक समुदायों में विभाजित होता है।सांप्रदायिकता से तात्पर्य उस संकीर्ण मनोवृत्ति से है, जो धर्म और संप्रदाय के नाम पर पूरे समाज तथा राष्ट्र के व्यापक हितों के विरुद्ध व्यक्ति को केवल अपने व्यक्तिगत धर्म के हितों को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें संरक्षण देने की भावना को महत्त्व देती है।

एक समुदाय या धर्म के लोगों द्वारा दूसरे समुदाय या धर्म के विरुद्ध किये गए शत्रुभाव को सांप्रदायकिता के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है।यह एक ऐसी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें सांप्रदायिकता को आधार बनाकर राजनीतिक हितों की पूर्ति की जाती है और जिसमें सांप्रदायिक विचारधारा के विशेष परिणाम के रूप में सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएँ होती हैं।सांप्रदायिकता में नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों ही पक्ष विद्यमान होते हैं।सांप्रदायिकता का सकारात्मक पक्ष, किसी व्यक्ति द्वारा अपने समुदाय के उत्थान के लिये किये गए सामाजिक और आर्थिक प्रयासों को शामिल करता है।[5,6] वहीं दूसरी तरफ इसके नकारात्मक पक्ष को एक विचारधारा के रूप में देखा जाता है जो अन्य समूहों से अलग एक धार्मिक पहचान पर ज़ोर देता है, जिसमें दूसरे समूहों के हितों को नज़रअंदाज़ कर पहले अपने स्वयं के हितों की पूर्ति करने की प्रवृत्ति देखी जाती है। निश्चित तौर पर

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

प्राचीन काल में समाज विभिन्न वर्गों एवं धर्मों में विभक्त था, बावजूद इसके हमें भारतीय समाज में सांप्रदायिकता के आधार पर हुई हिंसा के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती है।मौर्य काल में भी अशोक के शिलालेखों में धार्मिकता, सहिष्णुता के बारे में जानकारी मिलती है जिसमें उसकी धम्म नीति की चर्चा विशेष रूप से उल्लेखनीय है।मध्यकाल में अकबर द्वारा 'दीन -ए इलाही' की स्थापना भी सभी धर्मों को समान भाव से देखने से ही संबंधित थी।हालाँकि औरंगज़ेब द्वारा कुछ ऐसे कार्य किये गए जिन्हें धार्मिक दृष्टि से असहिष्णु कहा जा सकता है, जैसे-मंदिरों को तोड़ना, ज़बरन धर्मांतरण, सिख गुरु की हत्या आदि लेकिन ये सभी घटनाएँ सामान्य तौर पर घटित न होकर अपवाद स्वरूप ही थीं। हिंदू एवं मुस्लिम दोनों अपने आर्थिक हितों को साझा करते थे तथा दोनों ही शांतिपूर्वक सह-अस्तित्व में विश्वास रखते थे।भारत में सांप्रदायिकता के वर्तमान स्वरूप की जड़ें अंग्रेजों के आगमन के साथ ही भारतीय समाज में स्थापित हुई। यह उपनिवेशवाद का प्रभाव तथा इसके खिलाफ उत्पन्न संघर्ष की आवश्यकता का प्रतिफल थीं।[7,8]

हालाँकि 1857 के विद्रोह के समय भी हिंदू-मुस्लिम एकजुट होकर सामने आए परंतु इसके बाद स्थितियों में परिवर्तन आया तथा अंग्रेज़ों द्वारा 'फूट डालो राज करो' की नीति के माध्यम से भारत में अपने हितों की पूर्ति की गई। इसके लिये उनके द्वारा समय-समय पर 'सांप्रदायिक कार्ड' का प्रयोग किया गया।वर्ष 1905 में बंगाल विभाजन का कारण बेशक प्रशासनिक असुविधा को बताया गया परंतु इसे सांप्रदायिकता को आधार बनाकर ही पूरा किया गया।वर्ष 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता को आधार बनाकर की गई।वर्ष 1909 का मार्ले-मिंटो सुधार/ भारत शासन अधिनियम, जिसमें मुस्लिम वर्ग के लिये पृथक निर्वाचन मंडल की बात की गई, हिंदू-मुस्लिम एकता को कमज़ोर करने तथा दोनों वर्गों के बीच टकराव की स्थिति उत्पन्न करने के लिये ही लाया गया था।वर्ष 1932 में 'कम्यूनल अवॉर्ड' की घोषणा विभिन्न समुदायों को संतुष्ट करने के लिये की गई। इससे सांप्रदायिक राजनीति को और अधिक बढ़ावा मिला।वर्ष 1940 के लाहौर अधिवेशन में पृथक राज्य के रूप में एक मुस्लिम बहुल क्षेत्र पाकिस्तान की मांग करना सांप्रदायिकता की भावना से ही प्रेरित थी।वर्ष 1947 में भारत का विभाजन हुआ ।[9,10] हालाँकि यह विभाजन स्वतंत्रता के बाद हुआ परंतु इसका आधार तैयार करने में जहाँ सामाजिक, राजनीतिक कारण मुख्य रूप से उत्तरदायी थे तो वहीं सांप्रदायिक कारण भी समानांतर विद्यमान थे।सांप्रदायिकता के आधार पर राजनीति का यह क्रम यही पर नहीं रुका बल्कि आज़ादी के बाद भी आज तक भारतीय समाज एवं राजनीति में उपस्थित है।

विचार-विमर्श

वर्तमान परिदृश्य में सांप्रदायिकता की उत्पत्ति के लिये किसी एक कारण को पूर्णत: ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता बल्कि यह विभिन्न कारणों का एक मिला-जुला रूप बन गया है। सांप्रदायिकता के लिये ज़िम्मेदार कुछ महत्त्वपूर्ण कारण इस प्रकार हैं-

वर्तमान समय में विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा अपने राजनीतिक लाभों की पूर्ति के लिये सांप्रदायिकता का सहारा लिया जाता है।एक प्रक्रिया के रूप में राजनीति का सांप्रदायिकरण भारत में सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने के साथ-साथ देश में सांप्रदायिक हिंसा की तीव्रता को बढ़ाता है। विकास का असमान स्तर, वर्ग विभाजन, गरीबी और बेरोज़गारी आदि कारक सामान्य लोगों में असुरक्षा का भाव उत्पन्न करते हैं।असुरक्षा की भावना के चलते लोगों का सरकार पर विश्वास कम हो जाता है परिणामस्वरूप अपनी ज़रूरतों/हितों को पूरा करने के लिये लोगों द्वारा विभिन्न राजनीतिक दलों, जिनका गठन सांप्रदायिक आधार पर हुआ है, का सहारा लिया जाता है। पुलिस एवं अन्य प्रशासनिक इकाइयों के बीच समन्वय की कमी।कभी-कभी पुलिस कर्मियों को उचित प्रशिक्षण प्राप्त न होना, पुलिस ज़्यादती इत्यादि भी सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देने वाले कारकों में शामिल होते हैं। दो समुदायों के बीच विश्वास और आपसी समझ की कमी या एक समुदाय द्वारा दूसरे समुदाय के सदस्यों का उत्पीड़न,आदि के कारण उनमें भय, शंका और खतरे का भाव उत्पन्न होता है।इस मनोवैज्ञानिक भय के कारण लोगों के बीच विवाद, एक-दूसरे के प्रति नफरत, क्रोध और भय का माहौल पैदा होता है।[11,12]

मिडिया द्वारा अक्सर सनसनीखेज आरोप लगाना तथा अफवाहों को समाचार के रूप में प्रसारित करना।इसका परिणाम कभी-कभी प्रतिद्वंद्वी धार्मिक समूहों के बीच तनाव और दंगों के रूप में देखने को मिलता है।वहीं सोशल मीडिया भी देश के किसी भी हिस्से में सांप्रदायिक तनाव या दंगों से संबंधित संदेश को फैलाने का एक सशक्त माध्यम बन गया है।

भारत में सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति उत्पन्न करने और उसे प्रोत्साहित करने में विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक,आर्थिक और प्रशासनिक कारण सामूहिक रूप से ज़िम्मेदार रहे हैं।

इन सामूहिक कारणों की परिणति हमें सांप्रदायिक हिंसा के रूप में समय-समय पर देखने को मिलती है। देश में सांप्रदायिक हिंसा से संबंधित कुछ घटनाएँ इस प्रकार हैं-

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

- वर्ष 1947 में भारत का विभाजन
- वर्ष 1984 में सिख विरोधी दंगे
- वर्ष 1989 में घाटी से कश्मीरी पंडितों का निष्कासन
- वर्ष 1992 में बाबरी मस्ज़िद विवाद
- वर्ष 2002 में गुजरात में दंगे
- वर्ष 2013 में मुज़फ्फरपुर में दंगे इत्यादि।[13]

देश में बार-बार होने वाली सांप्रदायिक हिंसा धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने वाले संवैधानिक मूल्यों पर प्रश्नचिह्न लगता है।सांप्रदायिक हिंसा में पीड़ित परिवारों को इसका सबसे अधिक खामियाज़ा भुगतना पड़ता है, उन्हें अपना घर, प्रियजनों यहाँ तक कि जीविका के साधनों से भी हाथ धोना पड़ता है।सांप्रदायिकता समाज को सांप्रदायिक आधार पर विभाजित करती है।सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति में अल्पसंख्यक वर्ग को समाज में संदेह की दृष्टि से देखा जाता है और इससे देश की एकता एवं अखंडता के लिये खतरा उत्पन्न होता है।सांप्रदायिकता देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये भी चुनौती प्रस्तुत करती है क्योकि सांप्रदायिक हिंसा को भड़काने वाले एवं उससे पीड़ित होने वाले दोनों ही पक्षों में देश के ही नागरिक शामिल होते हैं। वर्तमान आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार करने के साथ-साथ, शीघ्र परीक्षणों और पीड़ितों को पर्याप्त मुआवज़ा दिये जाने की आवश्यकता है, जो पीड़ितों के लिये निवारक के रूप में कार्य कर सके।शांति, अहिंसा, करुणा, धर्मनिरपेक्षता और मानवतावाद के मूल्यों के साथ-साथ वैज्ञानिकता (एक मौलिक कर्त्तव्य के रूप में निहित) और तर्कसंगतता के आधार पर स्कूलों और कॉलेजों / विश्वविद्यालयों में बच्चों के उत्कृष्ट मूल्यों पर ध्यान केंद्रित करने, के मूल्य-उन्मुख शिक्षा पर जोर देने की आवश्यकता है जो सांप्रदायिक भावनाओं को रोकने में महत्त्वपूर्ण साबित हो सकते हैं।सांप्रदायिक दंगों को रोकने हेतु प्रशासन के लिये संहिताबद्ध दिशा-निर्देश जारी कर तथा, पुलिस बल के लिये विशेष प्रशिक्षण साथ ही, जाँच और अभियोजन एजेंसियों का गठन कर सांप्रदायिकता के कारण होने वाली हिंसक घटनाओं में कमी की जा सकती है।[14,15]सरकार, नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठनों को सांप्रदायिकता के खिलाफ जागरूकता के प्रसार में मदद करने वाली परियोजनाओं को चलाने के लिये उन्हें प्रोत्साहन और समर्थन प्रदान कर सकती है, ताकि आने वाली पीढ़ियों में मजबूत सांप्रदायिक सद्भाव के मूल्यों का निर्माण किया जा सके और इस प्रकार एक बेहतर समाज का निर्माण करने में मदद मिल सकती है ।सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये मज़बूत कानून की आवश्यकता होती है।अत: सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण और पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक, 2005 को मज़बूती के साथ लागू करने की आवश्यकता है।साथ ही बिना किसी भेदभाव के युवाओं की शिक्षा एवं बेरोज़गारी की समस्या का उन्मूलन किये जाने की आवश्यकता है ताकि एक आदर्श समाज की स्थापना की जा सके। वर्तमान समय में सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएँ भारत के साथ-साथ विश्व स्तर पर भी देखी जा रही हैं। धर्म, राजनीति, क्षेत्रवाद, नस्लीयता या फिर किसी भी आधार पर होने वाली सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये ज़रूरी है कि हम सब मिलकर सामूहिक प्रयास करें और अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन ईमानदारी एवं सच्ची निष्ठा के साथ करें। यदि हम ऐसा करने में सफल हो पाते हैं, तो निश्चित रूप से न केवल देश में बल्कि विश्व स्तर पर सद्भावना की स्थिति कायम होगी क्योकि सांप्रदायिकता का मुकाबला एकता एवं सद्भाव से ही किया जा सकता है।

परिणाम

भारत में जब भी साम्प्रदायिकता की बात चलती है तो उसका आशय हिन्दू मुस्लिम सम्बंधों में आपसी द्वेष से लिया जाता है। यदि साम्प्रदायिक समस्या के समाधान की भी बात की जाती है तो भी हिन्दू मुस्लिम विरोध को समाप्त करने का ही अर्थ लिया जाता है। असल में भारत में सम्प्रदाय का तात्पर्य ही हिन्दू- मुस्लिम विभाजन से है। 'यह तथ्य ध्यातव्य है कि 1914-15 के शहीदों ने धर्म को राजनीति से अलग कर दिया था। वे समझते थे कि धर्म व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है इसमें दूसरे का कोई दखल नहीं। इसे राजनीति में न घुसाना चाहिए क्योंकि यह समस्त भारतीय जनों को मिलकर एक जगह काम नहीं करने देता। इसलिए गदर पार्टी जैसे आन्दोलन एकजुट व एकजान रहे, जिसमें सिख बढ़-चढ़कर फाँसियों पर चढ़े और हिन्दू मुसलमान भी पीछे नहीं रहे। [16]यदि धर्म को अलग कर दिया जाये तो राजनीति पर हम सभी इकट्ठे हो सकते है। धर्मों में हम चाहे अलग-अलग ही रहें।' इतिहास के पन्नों में ऐसे अनगिनत मुस्लिम स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के नाम दर्ज हैं निन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में हिन्दू स्वातंत्र्य योद्धाओं के साथ मिलकर अपना बहुमूल्य योगदान दिया। अंग्रेजों के खिलाफ भारत के संघर्ष में अनेकों मुस्लिम क्रांतिकारियों, कवियों और लेखकों का योगदान उल्लेखनीय है। तितु मीर ने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ विद्रोह किया था। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद, हकीम अजमल खान और रफी अहमद किदवई भी इस संघर्ष में शामिल थे। शाहजहांपुर के अशफाक उल्ला खान ने काकोरी (लखनऊ)

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

पर ब्रिटिश राजकोष को लूटने की योजना बनाई थी। भोपाल के बरकतुल्लाह ग़दर पार्टी के संस्थापकों में से एक थे जिसने ब्रिटिश विरोधी संगठनों से नेटवर्क बनाया था। ग़दर पार्टी के सैयद शाह रहमत ने फ्रांस में एक भूमिगत क्रांतिकारी रूप में काम किया और 1915 में असफल गदर (विद्रोह) में उनकी भूमिका के लिए उन्हें फांसी की सजा दी गई। फैजाबाद (उत्तर प्रदेश) के अली अहमद सिद्दीकी ने जौनपुर के सैयद मुज़तबा हुसैन के साथ मलाया और बर्मा में भारतीय विद्रोह की योजना बनाई और 1917 में उन्हें फांसी पर लटका दिया गया। केरल के अब्दुल वक्कोम खदिर ने 1942 के 'भारत छोड़ो' में भाग लिया और 1942 में उन्हें फांसी की सजा दी गई थी। उमर सुभानी जो कि बंबई के एक करोड़पति उद्योगपति थे, उन्होंने गांधी और कांग्रेस स्वतंत्रता संघर्ष के लिए धन प्रदान किया था और अंततः स्वतंत्रता आंदोलन में अपने को कुर्बान कर दिया। मुसलमान महिलाओं में हजरत महल, असगरी बेगम, बाई अम्मा ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ स्वतंत्रता के संघर्ष में महतवपूर्ण योगदान दिया। खान अब्दुल गफ्फार खान (सीमांत गांधी के रूप में प्रसिद्ध) एक महान राष्ट्रवादी थे जिन्होंने अपने 95 वर्ष के जीवन में से 45 वर्ष जेल में बिताये। अफ़सोस आज हमें अपने शहीदों की कुर्बानी बिलकुल भी याद नहीं आती है ….!

1919 के जालियँवाला बाग हत्याकाण्ड के बाद ब्रिटिश सरकार ने साम्प्रदायिक दंगों का प्रचार शुरु किया। इसके असर से 1924 में कोहाट में बहुत ही अमानवीय ढंग से हिन्दू-मुस्लिम दंगे हुए। इसके बाद राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना में साम्प्रदायिक दंगों पर लम्बी बहस चली। इन्हें समाप्त करने की जरूरत तो सबने महसूस की, कांग्रेसी नेताओं ने हिन्दू-मुस्लिम नेताओं में सुलहनामा लिखाकर दंगों को रोकने के यत्न किये। हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य के पीछे शुरू में अंग्रेजों की सोची समझी रणनीति थी सो उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों को बांटने का काम शिक्षा और संस्कृति के उपयोग से संपन्न किया। अंग्रेज दूरदर्शी थे वे अपने खिलाफ भारतीयों की बदले की भावना का शमन करना चाहते थे सो उन्होंने यह विष बीज रोप दिया। इसी रणनीति से कट्टर हिंदूवादियों ने भी अपनी कारगुजारियां तेज कर दीं और कालांतर में भारतीय शासकों को भी इसी में अपना हित नजर आया।

भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन ने सांप्रदायिक दंगों पर अपने विचार प्रस्तुत किये थे। यह इस समस्या पर शहीद भगतसिंह और उनके साथियों के विचारों का सार है जो जून, 1928 के 'किरती'में छपा था उसके कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं ।

'इन धर्मों ने हिन्दुस्तान का बेड़ा गर्क कर दिया है। और अभी पता नहीं कि यह धार्मिक दंगे भारतवर्ष का पीछा कब छोड़ेंगे। इन दंगों ने संसार की नजरों में भारत को बदनाम कर दिया है। और हमने देखा है कि इस अन्धविश्वास के बहाव में सभी बह जाते हैं। कोई बिरला ही हिन्दू, मुसलमान या सिख होता है, जो अपना दिमाग ठण्डा रखता है, बाकी सब के सब धर्म के यह नामलेवा अपने नामलेवा धर्म के रौब को कायम रखने के लिए डण्डे लाठियाँ, तलवारें-छुरें हाथ में पकड़ लेते हैं और आपस में सर-फोड़-फोड़कर मर जाते हैं। बाकी कुछ तो फाँसी चढ़ जाते हैं और कुछ जेलों में फेंक दिये जाते हैं। इतना रक्तपात होने पर इन 'धर्मजनों' पर अंग्रेजी सरकार का डण्डा बरसता है और फिर इनके दिमाग का कीड़ा ठिकाने आ जाता है। यहाँ तक देखा गया है, इन दंगों के पीछे साम्प्रदायिक नेताओं और अखबारों का हाथ है। इस समय हिन्दुस्तान के नेताओं ने ऐसी लीद की है कि चुप ही भली। वही नेता जिन्होंने भारत को स्वतन्त्र कराने का बीड़ा अपने सिरों पर उठाया हुआ था और जो 'समान राष्ट्रीयता'और 'स्वराज्य-स्वराज्य'के दम मारते नहीं थकते थे, वही या तो अपने सिर छिपाये चुपचाप बैठे हैं या इसी धर्मान्धता के बहाव में बह चले हैं। सिर छिपाकर बैठने वालों की संख्या भी क्या कम है? लेकिन ऐसे नेता जो साम्प्रदायिक आन्दोलन में जा मिले हैं, जमीन खोदने से सैकड़ों निकल आते हैं। जो नेता हृदय से सबका भला चाहते हैं, ऐसे बहुत ही कम हैं। और साम्प्रदायिकता की ऐसी प्रबल बाढ़ आयी हुई है कि वे भी इसे रोक नहीं पा रहे। ऐसा लग रहा है कि भारत में नेतृत्व का दिवाला पिट गया है। दूसरे लोग जो साम्प्रदायिक दंगों को भड़काने में विशेष हिस्सा लेते रहे हैं, अखबार वाले हैं। पत्रकारिता का व्यवसाय, किसी समय बहुत ऊँचा समझा जाता था। आज बहुत ही गन्दा हो गया है। यह लोग एक-दूसरे के विरुद्ध बड़े मोटे-मोटे शीर्षक देकर लोगों की भावनाएँ भड़काते हैं और परस्पर सिर फुटौव्वल करवाते हैं। एक-दो जगह ही नहीं, कितनी ही जगहों पर इसलिए दंगे हुए कि स्थानीय अखबारों ने बड़े उत्तेजनापूर्ण लेख लिखे। ऐसे लेखक बहुत कम है जिनका दिल व दिमाग ऐसे दिनों में भी शान्त रहा हो। अख़बारों का असली कर्त्तव्य शिक्षा देना, लोगों से संकीर्णता निकालना, साम्प्रदायिक भावनाएँ हटाना, परस्पर मेल-मिलाप बढ़ाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता बनाना था लेकिन इन्होंने अपना मुख्य कर्त्तव्य अज्ञान फैलाना, संकीर्णता का प्रचार करना, साम्प्रदायिक बनाना, लड़ाई-झगड़े करवाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता को नष्ट करना बना लिया है। यही कारण है कि भारतवर्ष की वर्तमान दशा पर विचार कर आंखों से रक्त के आँसू बहने लगते हैं और दिल में सवाल उठता है कि 'भारत का बनेगा क्या?' जो लोग असहयोग के दिनों के जोश व उभार को जानते हैं, उन्हें यह स्थिति देख रोना आता है। कहाँ थे वे दिन कि स्वतन्त्रता की झलक सामने दिखाई देती थी और कहाँ आज यह दिन आ गया है कि स्वराज्य एक सपना मात्र बन गया है। बस यही तीसरा लाभ है, जो इन दंगों से अत्याचारियों को मिला है। जिसके अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया था, कि आज गयी, कल गयी वही नौकरशाही आज अपनी जड़ें इतनी मजबूत कर चुकी हैं कि उसे हिलाना कोई मामूली काम नहीं है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

यदि इन साम्प्रदायिक दंगों की जड़ खोजें तो हमें इसका कारण आर्थिक ही जान पड़ता है। असहयोग के दिनों में नेताओं व पत्रकारों ने ढेरों कुर्बानियाँ दीं। उनकी आर्थिक दशा बिगड़ गयी थी। असहयोग आन्दोलन के धीमा पड़ने पर नेताओं पर अविश्वास-सा हो गया जिससे बहुत से साम्प्रदायिक नेताओं के धन्धे चौपट हो गये।' हमारे यहां कोई ऐसा कानून नहीं है जो किसी घटना के घटने से पहले उसे रोकता हो या दंडित करता हो। यहां घटना हो जाने पर ही कानून काम करना प्रारम्भ करता है।[15,16]

दरअसल भारत के आम लोगों की आर्थिक दशा इतनी खराब है कि एक व्यक्ति दूसरे को बहुत छोटी धन राशि देकर किसी और को अपमानित करवा सकता है। भूख और दुख से आतुर होकर मनुष्य सभी सिद्धान्त ताक पर रख देता है। सच है, मरता क्या न करता। लेकिन वर्तमान स्थिति में आर्थिक सुधार होना अत्यन्त कठिन है क्योंकि सरकार विदेशी है और लोगों की स्थिति को सुधरने नहीं देती। इसीलिए लोगों को हाथ धोकर इसके पीछे पड़ जाना चाहिये और जब तक सरकार बदल न जाये, चैन की सांस नहीं लेना चाहिए। लोगों को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए वर्ग-चेतना की जरूरत है। जो लोग रूस का इतिहास जानते हैं, उन्हें मालूम है कि जार के समय वहाँ भी ऐसी ही स्थितियाँ थीं वहाँ भी कितने ही समुदाय थे जो परस्पर जूतम पैजार करते रहते थे। लेकिन जिस दिन से वहाँ श्रमिक-शासन हुआ, वहाँ नक्शा ही बदल गया। फिर वहाँ कभी दंगे नहीं हुए।

धर्म, जाति और लिंग सम्बंधी श्रेष्ठता की मानसिकता भी बहुत कुछ हमारी साम्प्रदायिक भावना को उभारने के लिए उत्तरदायी है। श्रेष्ठता की मानसिकता दूसरे के महत्व को स्वीकार करने की गुंजाइश समाप्त कर देता है और जब तथाकथित श्रेष्ठतबके के अंह को कहीं ठेस पहुंचती है तो वह साम्प्रदायिकता पर उतर आता है। यह एक सामंती मनोवृत्ति हैजो समानता की भावना के विपरीत है। कई धर्म हैं। समकालीन दुनिया में ये सब समानान्तर सक्रिय हैं। इन सब में स्वर्ग की कल्पना समान रूप से मौजूद है। बौद्ध धर्म को छोड़ कर लगभग सब में ईश्वर की धारणा भी मौजूद है। लेकिन ईश्वर, देवी-देवता, स्वर्ग और कर्म-काण्ड की धारणाएं तथा विधियां सबकी अलग-अलग हैं। ये धर्म जिन भौगोलिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों से जन्मे हैं, उनसे प्रतिमाएं, कल्पनाएं, मूल्य, विश्वास और रीति-रिवाज लेकर आए हैं। उदाहरण के लिए विश्व की उत्पत्ति से सम्बन्धित धारणा को लीजिए। वेदों में उत्पत्ति की कई धारणाएं हैं। कहीं जल को मूल तत्व माना गया। कहीं अण्ड को और कहीं ब्रह्म या फिर आत्मा को। पौराणिक काल से उपनिषदों वाले निराकार ब्रह्म की जगह निश्चित रूप-रेखा वाले ब्रह्मा विश्व के जनक बन जाते हैं। बुद्ध के अनुसार संसार की उत्पत्ति अविद्या से हुई। बाइबिल में ईश्वर ने गिन कर सात दिनों में सारे विश्व की रचना की। यह एक उदाहरण इस तथ्य का प्रमाण देने के लिए काफी है कि सारे धर्म, धारणाओं, विश्वासों और कर्म-काण्डों का अलग ढांचा रखते हैं और एक ही धर्म के भिन्न सम्प्रदाय परस्पर काफी भेद रखते हैं। ये अनुभव, बुद्धि और प्रयोग की इजाजत नहीं देते कि इनकी धारणाओं की जांच की जाए और विज्ञान की तरह किसी सार्वभौम निष्कर्ष पर पहुंचा जाए। ये अपने अनुयायियों से अपने-अपने मत को उसी रूप में स्वीकार करने का आग्रह करते हैं। तब स्वाभाविक है कि एक धर्म दूसरे धर्म की भिन्न धारणाओं के प्रति सन्देह, उपेक्षा और निषेध का रुख अपनाएगा। इस तरह धर्म परस्पर एकांगीपन, संकीर्णता और इस हद तक साम्प्रदायिकता का दृष्टिकोण बनाए रखते हैं।'

स्वर्गीय कवि गोरख पांडे के अनुसार 'धर्म हजारों साल से वर्गों और वर्णों में विभाजित समाज के आध्यात्मिक कवच का काम करता आ रहा है। अभाव, दुख और पराधीनता की शिकार आम जनता के लिए वह आशा का केन्द्र-बिन्दु रहा है। जब तमाम श्रम करने के बावजूद जनता इस समाज में सुख और मुक्ति का कोई उपाय नहीं देखती और विरोधी प्राकृतिक तथा सामाजिक शक्तियों के सामने असहाय महसूस करती है, तब एक ऐसे लोक की कल्पना करने और उसमें रमने के लिए मजबूर होती है, जहां सुख और स्वतन्त्राता की अतिरंजित सम्भावनाएं मौजूद हों। असहाय आदमी की सारी वंचित इच्छाएं, सारी उम्मीदें, सारे सपने धार्मिक चेतना में केन्द्रित हो उठते हैं। इस चेतना पर किसी तरह का प्रहार जीवन की सारी वांछित इच्छाओं, उम्मीदों, विश्वासों और सपनों के केन्द्र बिन्दु पर, और इस तरह समूचे जीवन पर ही, प्रहार लगता है। यह स्थिति भारी उत्तेजना और आवेश पैदा करने के लिए काफी होती है। अब अगर किसी समुदाय की धार्मिक भावना को दूसरे समुदाय के खिलाफ प्रेरित करते हुए कहा जाए कि यह तुम्हारी इच्छाओं, उम्मीदों, विश्वासों और सपनों के केन्द्र पर हमला कर रहा है तो उस समुदाय को, और इस तर्क के आधार पर दोनों समुदायों को, भावनात्मक उत्तेजना और उन्माद की उस स्थिति तक ले जाया जा सकता है, जहां उसे जीवन के मूल भौतिक रूप का संहार करने वाले दंगे में बदला जा सके।'

वरिष्ठ आई पी एस विभूति नारायण राय के अनुसार 'साम्प्रदायिक दंगों के बारे में सोचते समय भारत में बहुसंख्यक समुदाय तथ्यों को ओझल किये रहता है और उसका मन दो पूर्वाग्रहों में ग्रस्त रहाता है। औसत हिन्दू यह मान कर चलता है कि दंगों की शुरूआत मुसलमान करतें हैं और उनमें मरने वालों में ज्यादा हिन्दू होतें हैं। दंगों की शुरूआत के बारे में बहस की गुंजायश है लेकिन मरने वालों की तादाद के बारे में तो कतई नहीं। मरने वालों में न सिर्फ मुसलमानों की संख्या लगभग हर दंगे में ज्यादा होती है, बल्कि आधे

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

से ज्यादा दंगों में तो यह संख्या 90 प्रतिशत से भी अधिक होती है। दंगों की शुरूआत वाले मुद्दे पर बात करने के पहले हम मरने वालों की संख्या की पडताल करेंगे।

1960 के बाद हमारे देश में जो साम्प्रदायिक दंगे हुये हैं, उनका चरित्र सन् 47 के आसपास हुए विभाजन से सम्बन्धित दंगों के चरित्र से भिन्न हैं. 1960 तक विभाजन से उत्पन्न कारण लगभग समाप्त हो चुके थे और तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान से भागकर आने वाले हिन्दुओं के मुंह से सुनी हुई ज्यादतियों की प्रतिक्रियामें होने वाले कुछ दंगों को छोड दें तो लगभग अधिकतर दंगों के कारण विभाजन की स्मृति से एकदम परे हटकर थे। ये विभाजन के फौरन बाद क्षीण हुये मुस्लिम और हिन्दू साम्प्रदायिक संगठनों के पुनर्संगठित होने और राजनीतिक हितों के लिये दंगे कराने की बढती प्रवृत्ति के कारण ही हुये. सरकारी आंकडों से यह प्रकट होता है कि सभी दंगों में मारे गये लोगों में तीन चौथाई मुसलमान होतें हैं, नष्ट हुयी सम्पत्तु में भी लगभग 75 प्रतिशत मुसलमानों की होती है। यही नहीं, दंगों के लिये गिरफ्तार किये जाने वाले लोगों में भी मुसलमानों की ही संख्या ज्यादा होती है – अविश्वसनीय हद तक ज्यादा। आइए , हम बडे-बडे पांच-छः दंगों में मारे गए लोगों की संख्या की पडताल करें। 1960 के बाद का सबसे बडा दंगा अहमदाबाद में हुआ। राज्य सरकार ने न्यायमूर्ति जगमोहन रेड्डी के जाँच आयोग को अहमदाबाद के दंगों के बारे में जो आंकडे दिये, उनके मुताबिक इस दंगे में 6742 मकान. दुकान जलाई गयीं. इनमें सिर्फ 671 हिन्दुओं की थीं बाकी 6071 मुसलमानों की नष्ट हुयी कुल सम्पत्ति का मूल्य 42324068 रु. था, जिसमें हिन्दू सम्पत्ति 7585845 रु. की थी तो मुस्लिम सम्पत्ति 34738224 रु. की. 512 मृतकों में 24 हिन्दू थे तो 413 मुसलमान बाकी 75 की शिनाख्त नहीं हो सकी। इसके बाद का सबसे बडा दंगा 1970 में भिवंडी में हुआ. इसमें 78 लोग मारे गये.इनमें 17 हिन्दू थे तो 59 मुसलमान , बाकी दो की शिनाख्त नहीं हो सकी. भिवंडी दंगे की जांच के लिए नियुक्त न्यायमूर्ति डी. वी. मेडन जांच आयोग के सामने जो बयान दिये गये, उनसे यह प्रकट हुआ कि इस दंगे में 6 मुसलमान औरतों के साथ बलात्कार हुआ जबकि एक भी हिन्दू औरत बलात्कार की शिकार नहीं हुयी। भिवंडी के दंगों के परिणामस्वरूप हुये जलगांव के दंगे में 43 लोग मारे गये, जिनमें एक हिन्दू था, बाकी के 42 मुसलमान. नष्ट हुयी कुल सम्पत्ति में 3390977 रु. मूल्य की सम्पत्ति मुसलमानों की थी तो सिर्फ 83725 रु. मूल्य की हिन्दुओं की। 1967 में रांची-हटिया और नौशेरा में हुये दंगों में मृतकों की कुल संख्या 184 थी. जिनमें 164 मुसलमान थे तो 19 हिन्दू , एक की शिनाख्त नहीं हो सकी।

लेकिन इसके बावजूद बहुसंख्यक समुदाय की यह धारणा, कि दंगों में मरने वालों में अधिकतर हिन्दू होतें हैं, इतनी गहरी है कि तमाम सरकारी आंकडों के बावजूद औसत हिन्दू इस बात को नहीं मानेगा कि वास्तव में दंगों में हिन्दू ज्यादा आक्रामक होतें हैं। इस न मानने की बात को अगर गहराई से देखा जाय तो पता चलेगा कि इसके पीछे बचपन की धारणाएं काम करतीं हैं। बचपन से हर हिन्दू घर में बच्चे को यह सिखाया जाता है कि मुसलमान क्रूर होतें हैं और वे किसी की भी जान लेने में नहीं हिचकते। इसके विपरीत हिन्दू तो बडे क़ोमल हृदय का होता है और उसके लिये चींटी की भी जान लेना मुश्किल होता है। अक्सर आपको यह कहते हुये कोई हिन्दू मिलेगा कि अरे साहब ! हिन्दू घर में तो आपको सब्जी काटने की छूरी के अलावा कोई हथियार नहीं मिलेगा। यह हिन्दू प्रकारान्तर से यह मानता और कह रहा होता है कि आमतौर पर मुसलमान अपने घरों में हथियारों का जखीरा रखतें हैं।'[16,17]

गुजरात में सन २००२ का अभूतपूर्व सांप्रदायिक नरसंहार या अभी हाल में मुजफ्फरनगर के सांप्रदायिक दंगों की भी कमोबेश यही कहानी है। एक औसत हिन्दू की मानसिकता यह बना दी गई है कि मुसलमान पाकिस्तान लेकर अपने हिस्से का भाग ले चुके हैं अब उन्हें भारत में रहने का कोई अधिकार नहीं है। और यदि रहना है जो उनके अधीन होकर रहें। हमारे इस साम्प्रदायिक जुनून के लिए बहुत कुछ कानूनी व्यवस्था का अभाव, विधायिका और संवैधानिक निष्क्रियता भी दोषी है हमारा संविधान तो निष्क्रिय इसलिए हो रहा है क्योंकि वह 50-60 साल से ऐसे हाथों में ही रहा है जो साम्प्रदायिकता को उत्प्रेरक के रूप में प्रयोग करने वाले थे। और आज भी यही स्थिति है। यहां तक कि आज हमारी पूरी की पूरी राजनीति ही साम्प्रदायिकता के इर्द गिर्द ही घूमती नजर आती है। समाजवादी और वामपंथी भी साम्राज्यवाद, पूँजीवाद और गरीबी एवं साधनहीनता और बेरोजगारी की बात न करके पिछले छह दशकों से सत्ता पर काबिज रही पार्टी की विचार पद्धति को अपना चुके हैं। उनके लिए अब साम्प्रदायिकता ही देश की मूल समस्या है बाकी सब गौण। अब इसे क्या कहा जाये कि सब के सब साम्प्रदायिकता की मशाल लेकर मैदान में हों और यह न महसूस कर सकें कि ऐसे कार्यों से साम्प्रदायिकता कम नहीं होती बल्कि बढाती ही है। दुर्भाग्य से हमारे कुछ बुद्धिवादियों के साम्प्रदायिकता एक ऐसा बांड है जिसे वे कभी भी और कहीं भी भुना सकते हैं। साम्प्रदायिकता पर उनका इतना विशद अध्ययन है कि अब उनसे कोफ़्त होने लगी है क्योंकि पूरे भारतीय समाज की हर समस्या को वे साम्प्रदायिकता से कमतर आंकते हैं। यह भी कोई अच्छी स्थिति नहीं है। एक बार हमारे अग्रज कथाकार स्वयंप्रकाश की एक कहानी पढ़ाकर यह यह टिपण्णी कर दी थी कि कुछ लोगों को भारत में साम्प्रदायिकता के अतिरिक्त कोई और समस्या ही नहीं दिखती जिससे वे इतने उद्वेलित हो गए कि मेरे खिलाफ एक पत्रिका में तीखी टिप्पणी तो की ही जो कोई विशेष बात नहीं थी पर आज तक वे मुझसे खफा हैं यह दुर्भागयपूर्ण है कि हम अपनी आलोचना नहीं सुन सकते। यह भी हम जानते हैं कि भारत की संघीय सरकार ने पिछले छह दशकों में साम्प्रदायिक सौहार्द को बचाने के बजाय इसकी

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

खाई को अधिक चौड़ा ही किया है। संविधान में स्पष्ट लिखा गया है कि किसी भी धार्मिक संगठन को सांस्कृतिक और शैक्षणिक कार्यो के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता उभारने की अनुमति नहीं दी जायगी। पर हम बराबर देखते रहे हैं कि साम्प्रदायिकता हमेशा ही उभारी गयी है और संविधान को ताक पर रख दिया गया है। यहां राजनीतिज्ञों ने अल्पसंख्यक समुदाय को सदैव वोट बैंक के रूप में देखा है। उनमें सामाजिक बोध और वैज्ञानिक चेतना को विकसित न करके नितांत रूढ़िवादी और संकीर्णता के दायरे में कैद रहने देने में ही अपने स्वार्थ की पूर्ति की है।

निष्कर्ष

भारत को हमारे संविधान में धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है । अक्सर कहा जाता है कि भारत में धर्म-निरपेक्षवाद का भविष्य अंधकारमय है । यह एक विवादास्पद विषय है ।किन्तु पक्ष में जो तर्क दिया जाता है कि भारत में धर्मनिरपेक्ष समाज के निर्माण में धर्म सबसे बडी बाधा है, उसमें कोई दम नहीं । यह कहना अधिक सही हौगा कि सबसे बड़ी बाधा आजादी के बाद प्रचलित होती जा रही भ्रष्ट राजनीति है।

चिन्तनात्मक विकास: अपने मजहब में गहरी आस्था रखना "साम्प्रदायिकता" नहीं है । मजहब की आजादी तो हर मनुष्य का एक मौलिक अधिकार है । भारत के संविधान ने इस अधिकार को स्वीकारा है । साम्प्रदायिकता का अर्थ है, "मजहब का हौवा खडा करके लोगों की भावनाओं को भड़काना और 'राष्ट्रीयता' के बजाए 'मजहबी उन्माद' फैलाना ।"कट्टरपंथी ताकतें राष्ट्र को एकता व प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने से रोकती हैं । वास्तव में भारत में साम्प्रदायिकता का उदय एवं विकास ब्रिटिश शासकों द्वारा किया गया । धर्म एवं जाति के नाम पर सभी लोगों में ईर्ष्या-द्वेष एवं भेदभाव साम्प्रदायिकता को जन्म देते हैं ।परिणामस्वरूप देश में हिंसात्मक घटनाएं प्रतिदिन होती रहती हैं । यह वर्तमान समय की एक विकट समस्या है जिसने समुचित राष्ट्रीय विकास के समस्त मार्ग अवरूद्ध कर दिये हैं । इससे देश की आन्तरिक शान्ति एवं एकता ही नहीं अपितु समूचे विश्व की शान्ति भी भंग होती है ।स्वभाव से ही राजनीति सारे देश पर अपना प्रभाव डालती है । इस, कारण यह कहना सही होगा कि भारत में धर्मनिरपेक्षता का भविष्य राजनीति की प्रकृति से जुड़ा है । यदि स्वच्छ राजनीति का प्रचलन होगा और सभी दल राष्ट्रीय मुद्दों को ईमानदारी से उठाएंगे तब धर्मनिरपेक्षता का भविष्य निश्चय ही उज्जवल होगा ।किन्तु यदि ये दल द्वेष एवं बंटवारे की राजनीति का खेल खेलते रहेंगे, तो उनके वोट बैंक भले ही सुनिश्चित हो जाएंगे, परन्तु धर्मनिरपेक्षवाद और देश का भविष्य अंधकार में ही डूबा रहेगा । हमारा देश इक्कीसवीं सदी में उन्नत रूप में प्रवेश करेगा या विनष्ट दशा में, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि हम इस समस्या से किस प्रकार निपटते हैं ।साम्प्रदायिकता से तात्पर्य किसी धर्म एवं भाषा से है जिसमें किसी समूह विशेष के हितों पर बल दिया जाता है और इन हितों को राष्ट्रीय हितों से अधिक प्राथमिकता दी जाती है । उस समूह मे पृथकता की भावना पैदा की जाती है और उसे प्रोत्साहन दिया जाता है ।

पारसियों, बौद्धो, जैनियों तथा ईसाईयों के अपने-अपने संगठन हैं, साथ ही वे अपने सदस्यों के हितों की साधना में लिप्त रहते हैं, किन्तु ऐसे संगठनो को प्राय: साम्प्रदायिक नहीं कहा जाता क्योंकि इनमें पृथकता की भावना नहीं होती है ।[15]

इसके विपरीत, हिन्दू महासभा, मुस्लिम लीग एवं अन्य कुछ संस्थाओं को साम्प्रदायिक कहा जा सकता है क्योंकि वे धार्मिक अथवा भाषा समूहों के अधिकारों तथा हितों को राष्ट्रीय हितों से सर्वोपरि रखते हैं । विसेंट स्मिथ के अनुसार एक सामुदायिक व्यक्ति या व्यक्ति समूह वह है जो कि प्रत्येक धार्मिक अथवा भाषायी समूह को एक ऐसी पृथक् सामाजिक तथा राजनीतिक इकाई मानता है, जिसके हित अन्य समूहों से पृथक् होते हैं और उनके विरोधी भी हो सकते हैं ।

ऐसे ही व्यक्तियों अथवा व्यक्ति समूह की विचारधारा को सम्प्रदायवाद या सम्प्रदायिकता कहा जाएगा । साम्प्रदायिक संगठनों का उद्देश्य शासको के ऊपर दबाव डालकर अपने सदस्यों हेतु अधिक सत्ता, प्रतिष्ठा तथा राजनीतिक अधिकार प्राप्त करना होता है ।[16]

मानव इतिहास में सदैव धर्म-के नाम पर विवाद उठते रहते है । धर्म की दृष्टि से भारत विशेष रूप से हतभाग्य रहा है । स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय अग्रेजों ने भारत में अपना शासन बनाए रखने के लिए धार्मिक भेद-भावों का विशेष लाभ उठाया ।

आज भी राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में धर्म के आधार पर भेदभाव किये जाते हैं । राजनीतिज्ञ और राजनीतिक दल धर्म एवं सम्प्रदाय को राजनीतिक सफलता के लिए एक साधन के रूप मे अपनाते रहे है । साम्प्रदायिक झगडे भले ही छुटपुट और स्थानीय

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|

||Volume 11, Issue 11, November 2022||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1111105 |

हों, लेकिन उनसे देश की बदनामी होती है और उसका लोकतान्त्रिक धर्मनिरपेक्ष स्वरूप कलंकित होता है क्योंकि साम्प्रदायिकता का उद्देश्य संकुचित हितो की रक्षा करना होता है ।

अत: राष्ट्रीय नेताओं पर यह दायित्व है कि वे समुदाय के सीमित तथा राष्ट्र के बृहत्तर हितो के मध्य सन्तुलन स्थापित करें, समुदाय को राष्ट्र में बदलें । भविष्य मे यह आशा व्यक्त की जा सकती है कि राजनीतिक चेतना एवं लोकतान्त्रिक आदर्शो एवं मूल्यो में वृद्धि होने से देश में धर्मनिरपेक्षता का स्वरूप भी निखरता जाएगा ।[17]

संदर्भ

1. 'Barbara Metcalf; Thomas Metcalf (2006). A Concise History of Modern India (PDF) (2nd ed.). Cambridge University Press. p. 194'
2. ↑ "संग्रहीत प्रति". मूल से 26 दिसंबर 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 जुलाई 2020.
3. ↑ The Bombay Chronicle, 18 August 1932, in Dhananjay Keer, Dr.Ambedkar: Life and Mission (Popular Prakashan, 1971).
4. Ali, Tariq (1985). An Indian Dynasty. G.P. Putnam. p. 196.
5. ^ Bapu 2013, p. 61.
6. ^ Six, Clemens (2017). Secularism, Decolonisation, and the Cold War in South and Southeast Asia. Routledge. The Hindu Mahasabha, a far-right Hindu nationalist political party
7. ^ Klostermaier, Klaus K. (1989). A survey of Hinduism. State University of New York Press. p. 403.
8. ^ Bingham, Woodbridge (1974). A History of Asia. Allyn and Bacon. p. 601.
9. ^ Hauner, Milan (1981). India in Axis strategy. Klett-Cotta. p. 66.
10. ^ Jaffrelot, Christophe (2010). Religion, Caste, and Politics in India. Primus Books. p. 63.
11. ^ Cush, Denise (2012). Encyclopedia of Hinduism. Routledge. p. 316.
12. ^ Misra, Amalendu (1999). "Savarkar and the Discourse on Islam in Pre-Independent India". Journal of Asian History. 33 (2): 175.
13. ^ Chatterjee, Nirmal C. (1959). Hindu Mahasabha Tracts. Vedic Press. p. 12.
14. ^ Tamadonfar, Mehran (2013). Religion and Regimes. Lexington Books. p. 125.
15. ^ Delap, L (2013). Men, Masculinities and Religious Change in Twentieth-Century Britain. Springer. p. 152.
16. ^ Kumaraswamy, P.R. (2010). India's Israel Policy. Columbia University Press. p. 159.
17. ^ Luce, Henry Robinson (17 October 1949). "INDIA: Anchor for Asia". Time. Vol. 54. Time Incorporated. p. 33.

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 8.118

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर
NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com

Scan to save the contact details